8

भाषा की कक्षा में अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता एवं अवसर

प्रमोद दीक्षित 'मलय'*

शिक्षा और भाषा के मुद्दों पर काम करने के कारण अक्सर विद्यालयों में जाना होता है। बच्चों के साथ बैठना और उनसे बातें करना भी मेरे काम में शामिल होता है। तो विद्यालयों में भ्रमण के दौरान स्पष्ट रूप से यह देखने में आया कि शिक्षण में नवाचारों के प्रयोग और बाल-केंद्रित प्रयासों को गति देने के आग्रहों के बाद भी शिक्षकों के अध्यापन के तौर-तरीके न केवल परंपरागत शिक्षक-केंद्रित, भय एवं दंड प्रधान हैं, बल्कि कक्षाओं का वातावरण बोझिल, अरुचिकर और नीरस बनाये रखने के लिए ज़िम्मेवार भी हैं। कुछ स्वप्रेरित शिक्षकों को छोड़कर अभी भी शिक्षकों के एक बड़े हिस्से द्वारा ऐसे कोई सकारात्मक प्रयास नहीं किए जा रहे हैं जिससे बच्चों को विद्यालय अपनी सपनीली जगह लगे। हम बच्चों को यह एहसास नहीं दिला पाये हैं कि विद्यालय वह रचनात्मक स्थान है जहाँ वे अपने सपनों की उड़ान भर सकते हैं, कल्पना को मूर्त रूप प्रदान कर सकते हैं। विद्यालय उस फलक की तरह नहीं उभर पाया जहाँ बच्चे मौलिक चिंतन को अभिव्यक्त कर सकें और विचारों का आदान-प्रदान कर सकें। कक्षा में प्रस्तुत विषय पर उनके अभिमत देने के लिए कोई जगह नहीं बन सकी है। आज भी बच्चों के दिलो-दिमाग में शिक्षक हावी हैं। विद्यालय उसे अपना-सा लगे और यह तभी संभव होगा जब शिक्षकों को हर बच्चा अपना-सा लगने लगे।

एक प्राथमिक विद्यालय में मेरा जाना हुआ। मैं बरामदे में प्रधानाध्यापक के साथ बैठा था। वह विद्यालय के अभिलेख एवं पंजिकाएँ आदि दिखा रहे थे। निश्चित रूप से सभी पंजिकाएँ साफ़-सुथरी, सुंदर लिखावट में थीं। बगल के कक्ष से किसी शिक्षक के पढ़ाने की ध्वनि आ रही थी। संभवतः भाषा की कक्षा थी। शिक्षक गाय पर निबंध लिखवा रहे थे। निबंध कुछ इस प्रकार था, 'गाय के चार पैर होते हैं, गाय के दो आँखें, दो कान, दो सींग होते हैं। एक लंबी पूँछ होती है। चार थन होते हैं। गाय सफ़ेद रंग की होती है। गाय भूसा खाती है। गाय गोबर करती है। गाय हमारी माता है, आदि। फिर शिक्षक का आदेशात्मक स्वर गूँजा, 'इस निबंध को अच्छी तरह से रट लेना, कल सुनूँगा।' वह शिक्षक एक विशेष प्रकार की संतुष्टि का भाव लिए उस कक्षा से

* *सह समन्वयक* (हिंदी भाषा), ब्लॉक संसाधन केंद्र, नरैनी, बाँदा, उत्तर प्रदेश

निकलकर दूसरी कक्षा में चले गये। कहना पड़ेगा कि शिक्षक ने अपनी ओर से भरपूर मेहनत की है। लेकिन क्या इस पूरे पीरियड में *एन.सी.एफ़. 2005* का तनिक भी असर दिखा। क्या बच्चों का परिवेश से संबंध जुड़ पाया? क्या बच्चों के मन में उमड़ते प्रश्नों को स्थान मिल पाया है? क्या पूरे समय में बच्चों के मन की बातें जानने की कोई कोशिश हुई या बच्चों को गाय को लेकर उनके अपने अनुभव साझा करने के अवसर मिले? एक ही उत्तर मिलेगा— नहीं, बिल्कुल नहीं।

मैं आश्चर्यचकित था कि एक शिक्षक इस प्रकार कैसे पढ़ा सकता है। अब मेरे लिए अवसर मुँह बाएँ खड़ा था कि मैं उस कक्षा में प्रवेश करूँ और बच्चों से बातचीत करूँ। मेरे कक्षा में जाते ही बच्चे सहम-से गये और खिड़की से बाहर झाँक रहे बच्चे चुप होकर बैठ गये। मैं अनुभव कर रहा था कि बच्चों में एक डर छुपा बैठा है, लेकिन उनमें मेरे बारे में जानने की उत्सुकता थी। मेरे पीछे विद्यालय के प्रधानाध्यापक भी खड़े थे। उन्होंने बच्चों से कहा, "चुपचाप सीधे बैठो, ये हमारे अधिकारी है। बी.आर.सी. से आये हैं। जो कुछ पूछा जाये सही-सही बताना।" यह कहते हुए वह कक्षा में घूम रहे थे और बिना किसी बात के दो-तीन बच्चों के सिर पर हल्की चपत भी लगायी। मेरे मना करने पर बोले, "सर, मैं अनुशासन के मामले में बहुत कड़ा आदमी हूँ, मेरे रहते बच्चों की मजाल नहीं है कि कोई टस से मस हो जाए" मैंने उनसे कहा कि 'मैं बच्चों से अकेले में बात करना चाहता हूँ।' वह यह कहते हुए बाहर निकल गये कि यदि बच्चे शोर या मुझे परेशान करें तो मैं उन्हें तुरंत बुला लूँ। मैंने कहा कि आपकी ज़रूरत नहीं पड़ेगी।

अब कक्षा में केवल मैं और बच्चे थे। मैंने बच्चों को अपना परिचय दिया और उनसे भी उनका परिचय देने को कहा। एक भी बच्चा नहीं बोला। सभी सिर झुकाये बैठे रहे। मैंने कई बार कोशिश की। एक भी बच्चे ने नाम नहीं बताया। मैंने एक लड़के को उसका नाम बताने को संकेत किया। वह पैरों की कैंची बनाये और हाथों की अँगुलियों को आपस में फँसाये सिर झुकाये खड़ा हो गया। मैंने देखा वह सिर झुकाए पैर के अँगूठे से फ़र्श पर कुरेदने जैसा काम कर था और अँगुलियाँ तोड़-मरोड़ रहा था। एक लड़की से पूछा तो उसने अपनी शर्ट का कोना पकड़े छत पर निगाहें जमा लीं। इसी तरह और दो-तीन बच्चों से उनका परिचय जानना चाहा, लेकिन वे अबोले ही रहे। मुझे कुछ भी समझ में नहीं आ रहा था कि बच्चे अपने नाम क्यों नहीं बता पा रहे। मैं सोच रहा था कि क्या करूँ, कहाँ से बात शुरू करूँ। तभी शायद कक्षा में नज़र जमाये बरामदे में खड़े, प्रधानाध्यापक चिल्लाये, "अरे, मुँह में दही जमाये हो क्या। क्यों नहीं बोलते, वैसे तो आसमान सर पे उठाये रहते हो।" मुझसे बोले, "सर आपसे डर रहे हैं, इसीलिए नहीं बोल रहे।" मैंने बच्चों से मेरे चेहरे की ओर देखने को कहा और मैंने अपने चेहरे पर विभिन्न प्रकार की आकृतियाँ बनाईं तो वे सब खिलखिलाकर हँस पड़े उनके साथ मैं भी हँस पड़ा। कक्षा का वातावरण थोड़ा हल्का हुआ। अब वे मुझसे नज़रें मिला रहे थे। मैंने ब्लैकबोर्ड में कुछ क्रिया शब्द लिखे— हँसना, रोना, दौड़ना, डरना, गुस्सा करना, चिल्लाना आदि। मैंने बच्चों से पढ़ने को कहा। कुछ पढ़ पाये, कुछ नहीं। अब मैंने कहा कि मैं इनमें से कोई एक शब्द पढ़ूँगा और आप सब वैसी क्रिया-अभिनय

करेंगे। मैंने पढ़ा — रोना। बच्चों ने कुछ भी नहीं किया। मैंने कई बार कोशिश की लेकिन बच्चों ने नहीं किया। उन्हें शायद शर्म आ रही थी। वे कुछ झिझक रहे थे। उनके लिए संभवतः यह सब पहली बार हो रहा था। मैंने प्रक्रिया में बदलाव किया। अच्छा तो आप में से कोई एक शब्द पढ़ो और मैं वह क्रिया करूँगा। लेकिन शब्द पढ़ने से पहले अपना परिचय भी देंगे। एक लड़की सकुचाती-सी खड़ी हुई और अपना नाम 'रजनी' बोलते हुए शब्द पढ़ा — रोना। तो मैं रोने का अभिनय करते हुए रोने लगा। बच्चे खूब हँसे तालियाँ बजाकर। फिर दूसरे बच्चे ने अपना नाम 'राज' बोला और शब्द पढ़ा — डरना। तो मैंने डरने की क्रिया की। अब बच्चे बातचीत का मज़ा लेने लगे थे। हर कोई शब्द पढ़ना और मुझे वैसी क्रिया करते देखना चाहता था। शब्द पढ़ने हेतु खड़े होने के लिए बच्चों में होड़-सी शुरू हो गई। वे 'अब मैं....., अब मैं.......' अपना नाम बोलते और हाथ से अपने सीने की ओर संकेत करते खड़े होने लगे। इस कारण कक्षा में थोड़ा अफरातफ़री का माहौल बन गया और शोरगुल भी होने लगा। मैंने कहा कि सबको मौका मिलेगा। आप सब अपनी-अपनी जगह पर बैठिए। कक्षा में बिल्कुल शांति छा गई और वे सब मेरे चेहरे की ओर टकटकी लगाए देखने लगे। मैं बोला कि अब मैं कोई भी शब्द बोलूँगा और आप सब एक साथ चेहरे पर वैसा भाव लाते हुए क्रिया करेंगे। मैंने कहा, "रोटी" तो बच्चों ने रोटी बनाने और खाने का भाव प्रदर्शन किया। नींबू कहने पर उनके चेहरे पर खट्टेपन के भाव उभरे। ऐसे ही जलेबी, गन्ना, मिर्च, दाल-चावल, जाड़ा आदि शब्द बोलने पर बच्चों ने उसी प्रकार की अभिव्यक्ति की। अब बच्चे बिल्कुल खुलकर बातें कर रहे थे। मैं तो बच्चों को गाय पर निबंध लिखने के बारे में बात करने आया था। तो उस दिशा में बच्चों को मोड़ते हुए बातचीत का सिलसिला प्रारंभ किया। तो बताओ, आप लोगों में से किस-किस के पास कोई जानवर है। बच्चे बताने लगे — बैल, भैंस, गाय, कुत्ता, बकरी, भेड़, पड़वा (नर भैंस), बिल्ली, सुअर आदि। बच्चों ने बातचीत में यह भी बताया कि ये जानवर क्या काम करते हैं। खेती-किसानी और अन्य कार्यों में इनकी क्या उपयोगिता है। यदि ये जानवर न हों तो फिर ये काम कैसे निबटाये जाएँगे। बच्चों ने इस पर भी अपने विचार रखे। अच्छा गाय किनके पास है। लगभग तीन चौथाई बच्चों के हाथ ऊपर उठ चुके थे। आप लोग गाय के साथ क्या करते हो। परिवार के अन्य लोग क्या करते हैं? सुबह से शाम तक गाय के साथ क्या-क्या घटित होता है। तो आप लोग गाय के साथ जैसा भी कार्य-व्यवहार देखते हैं, उन अनुभवों को लिखना है। यह आपका अपना निबंध होगा। जिनके पास गाय नहीं है, वे अपने पड़ोसी की गाय पर अपना अनुभव लिख कर लाएँगे। तभी एक लड़की ने कहा कि अभी तो सर ने एक निबंध लिखाया है तो उसका क्या। मैंने कहा वह एक सूचना है कि अगर कोई जानवर इस प्रकार की पहचान का हो तो उसे गाय कहा जायेगा। ठीक है, कल हम लोग फिर मिलेंगे तो आगे बात करेंगे।

मैं घर आ गया था। अपनी डायरी में आज दिनभर की गतिविधियों को दर्ज़ करते हुए आँखों से नींद गायब थी। सुबह का बेसब्री से इंतजार था। बच्चे क्या लिखेंगे, कैसे लिखेंगे, यह सब पढ़ने की मन में आतुरता थी। ऐसा लग रहा था कि आज की रात जैसे दो रातों को

मिलाकर एक रात बना दी गयी हो। लेकिन सुबह तो होनी ही थी।

दूसरे दिन जब विद्यालय पहुँचा तो बच्चे इंतज़ार करते मिले। मुझे देखते ही सब अपनी-अपनी कॉपियाँ लेकर निबंध दिखाने दौड़ पड़े। हर कोई अपनी कॉपी पहले दिखा लेना चाहता था। मैंने सभी के निबंध देखे। मैं आश्चर्यचकित था कि ये कल के वही बच्चे हैं जो बोल-लिख नहीं पा रहे थे। और आज गाय पर अपने अनुभवों के आधार पर निबंध लिख कर लाये थे। सबने अपने निबंध गाय के साथ उनके निजी संबंधों के आधार पर लिखे थे। बहुत प्यारी बातें उभर कर आयी थीं। गाय और उससे जुड़ी हर छोटी-बड़ी बात को बच्चों ने बखूबी लिखने की कोशिश की थी। उनके लेखन में वर्तनी की बहुत अशुद्धियाँ थीं लेकिन भाषा उनकी अपनी थी जिसमें उनके परिवेश की बोली के शब्द घुले-मिले थे। भाव और उनका प्रवाह सहज था। मौलिक चिंतन तो था ही साथ ही कल्पना को व्यक्त होने का भरपूर अवसर मिला था। हर निबंध में उनकी अपनी छाप थी। लेकिन दो कापियाँ देखकर मैं ठिठका। दोनों में बहुत समानताएँ थीं। दोनों कॉपियाँ में लगभग एक जैसी बातें लिखी गई थीं। राहुल ने लिखा था, “मेरा बाबू पार साल बल्लान गाँव के चम्भू बाबा के मेला से एक गाय लाया है। गाय के एक बछवा है। बाबू खेत से हरियार (हरी घास) लाता है और कटिया मशीन से कतर कै भूसे मा मिलाते है। अम्मा भूसे मे खरी (खली) से सानी लगाती है और दोहनी करती है। दोहने में मैं भूसा मे पिसान धुरुकता हूँ और गाय ढाई लीटर दूध देती है। और बाबू सुबेरे पहर का दो लीटर दूध बेच आता है। वहै पैसे का आलू-भांटा लाते है। और कापी, पेन लाता है। इतवार का दूध अम्मा औट लेती है और मिठाई बनाती है। और एक पहरे का दूध का माठा भांते है तौ नेनू निकर आता है तौ रोटी मा चुपर लेते है। और नेनू टघराय के एक किलो घी जुहा लिया है। गोबर से अम्मा कंडा पाथती है और सुखा जाने पर चुल्हा मा रोटी बनाने को आग बारते है। मैं रोज सुबेरे और स्कूल से लौटने के बाद बछवा को खेलाता हूँ और उसके साथे साथ दौड़ता हूँ। गाय पहले सबका मारती थी पर अब नही मारती है।” यह निबंध पढ़कर मन खुश हो गया। बच्चे के अपने भाव, उसकी अपनी भाषा में मातृभाषा में जैसे किसी सरोवर से डुबकी लगा-लगाकर बाहर निकल रहे हों। दूसरी कॉपी आकांक्षा की थी। उसने राहुल की बातों से मिलती-जुलती बातें लिखी थीं। मैंने दोनों को बुलाया और जानना चाहा कि जब सबको अपनी-अपनी गाय पर निबंध लिखना था तो फिर तुम दोनों की कॉपियाँ में ये बातें एक जैसी कैसे हैं? उनके उत्तर सोचने को मजबूर कर रहे थे। राहुल का कहना था कि उसकी अपनी गाय के साथ दिनभर जो होता है उसे वह देखता है, उसी को लिखा है। आकांक्षा ने कहा कि उसके पास गाय नहीं है। उसने जो निबंध लिखा है वह राहुल की गाय पर है। राहुल उसके पड़ोस में रहता है। राहुल और उसके मम्मी-पापा जो कुछ भी गाय के साथ दिनभर करते हैं उसे वह देखती है। उसी आधार पर यह निबंध लिखा है। बच्चों का

यह प्रयास दिल को सुकून दे रहा था। कुछ बच्चों ने यह भी बताया कि उन्होंने अपने पालतू कुत्तों पर भी इसी प्रकार निबंध लिखा है। मैं बच्चों में निबंध लेखन की बन गई एक सामान्य समझ देख पा रहा था।

मैं सोच रहा था कि हमारे शिक्षक बच्चों को लेखन के अभिव्यक्ति के ऐसे मौलिक अवसर क्यों नहीं उपलब्ध करा पा रहे। बच्चों को मौलिक चिंतन के पर्याप्त अवसर दिये जाने चाहिए। *राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005* में इस बात की बार-बार अनुशंसा की गई है कि बच्चों को रटने के बजाय उनमे समझ विकसित करते हुए मौलिक चिंतन-मनन के अवसर उपलब्ध कराये जाएँ। हम अपने तरीके लाद कर कहीं बच्चों की सोचने-समझने की उनकी मौलिक और प्राकृतिक सोच को कुंद और धारहीन तो नहीं कर रहे, सोचना पड़ेगा।